क्या सभी बच्चों को स्कूल में गणित सिखाना चाहिए ?

"गणित शिक्षण कितना जरूरी" विषय पर आयोजित इस संवाद मे दिल्ली सरकार द्वारा संचालित प्राथमिक स्कूल के दो शिक्षकों, माध्यमिक स्तर के एक शिक्षक, डाइट की एक प्राध्यापिका और दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षा संकाय द्वारा संचालित प्रायोगिक स्कूल की शिक्षिका ने भागीदारी की। जिनके नाम क्रमशः आलोक तिवारी, संजीव शर्मा, अक्षय दीक्षित, शारदा और अवंतिका दाम है। संवाद मे चर्चा प्रेरक की भूमिका हृदयकान्त दीवान ने निभाई। विशेषज्ञ के रूप में विकासशील समाज अध्ययन पीठ (सीएसडीएस) के भारतीय भाषा कार्यक्रम से जुड़े अभय कुमार दुबे उपस्थित रहे। इस कार्यक्रम की रिकॉर्डिंग में ज़ामिया विश्वविद्यालय में एम फिल की छात्रा सुबरना बिस्वास ने सहयोग किया। सं.

हृदयकान्त दीवान

भारत में और दुनिया भर में यह प्रश्न चर्चा व बहस का मसला रहा है कि कौन-सी कक्षा तक गणित पढ़ाया जाना चाहिए; बहुत पहले से इस पर बात की जा रही है। यह सवाल तो अब बहस का मसला नहीं है कि सभी लोगों को कुछ सीखना ही चाहिए– इसमें गणित भी शामिल है।

बुनियादी शिक्षा की अनिवार्यता पर बहुत ज़ोर पिछली सदी के शुरू से था। इसमें लिखना, पढ़ना और अंकगणित शामिल हैं। अंकगणित, गणना से और रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से सम्बन्धित है; इसे हम अपने आसपास वैसे ही पाते हैं जैसे कि भाषा। लेकिन जैसे-जैसे तकनीक और विज्ञान का विकास हुआ वैसे-वैसे भिन्न क्षेत्रों के ढाँचों की ज़रूरत पड़ने लगी, जिस की वज़ह से गणित में धीरे-धीरे और चीज़ें भी शामिल होने लगीं।

पहले बीजगणित 11वीं कक्षा में पढ़ाया जाता था, फिर वह 8वीं में आ गया, अब बीजगणित छठवीं कक्षा से ही पढ़ाया जाता है। नम्बर सिस्टम की समझ, जिस में नैचुरल नम्बर की अवधारणा, और फिर अन्य तरह के संख्या समूह से परिचय भी शामिल है, भारतीय उच्च माध्यमिक स्कूलों के गणित में 1970 में आया। उसमें अमूर्तता, गणितीय भाषा, सामान्यीकरण व गणना से आगे बढ़ कर अपेक्षाएँ थीं। हालाँकि ज्यामिति तब भी कुछ एक प्रमेय व उन पर आधारित सवालों से ही निर्धारित थी, और इसी तरह से कोऑर्डिनेट व ट्रिग्नोमैट्री शामिल थी। फिर, 11वीं कक्षा में कैल्कुलस की भी शुरुआत हुई, पर यह सब सिर्फ गणित पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए था। अनिवार्य गणित, कक्षा 8 तक के स्तर तक ही थी और उस में यह सब नहीं था। धीरे-धीरे गणित कक्षा 10 तक अनिवार्य हुई और उस की पाठ्यचर्या व पाठ्यक्रम भी बदले और 10वीं तक क्या गणित पढ़ाया जाए यह महत्तवपूर्ण मसला बना।

अब मैं सीधा एनसीएफ-2005 पर आ जाता हूँ, जिसमें कई चीज़ों पर सवाल उठाए गए हैं। जैसे, बच्चों को गणित से डर लगता है; अनिवार्य गणित सिर्फ गणना नहीं है, उस के और भी आयाम हैं– जैसे एलजेब्रा है, रेखागणित है, डाटा हैण्डलिंग है, औपचारिक सेट थियरी तो नहीं है पर उस का उपयोग है– ये सभी गणित का हिस्सा हैं। बहुत सी बातों को ध्यान में रखते हुए यह चुनाव किया गया है। ज़्यादा अमूर्तता से बचा गया है शायद! पर क्या यह उपयुक्त है, पर्याप्त है?

एनसीएफ बहुत स्पष्ट रूप से कहता है कि गणित शिक्षण में यह सब इसलिए ज़रूरी है क्योंकि ऐसे विषय दिमाग का विकास करने में और गणित को अपनी ज़िन्दगी के साथ जोड़ने में मदद करता है। एनसीएफ यह भी कहता है कि गणित के दो उद्देश्य हो सकते हैं– एक तो कमतर, कनिष्ठ स्तर का, मतलब रोज़मर्रा का गणित, और दूसरा हायर ऑर्डर का गणित जिस का तात्पर्य है मैथमैटाइजेशन। एनसीएफ के अनुसार एक प्रजातांत्रिक समाज के लिए मैथमैटाइजेशन ज़रूरी है इसलिए माध्यमिक स्तर तक ऐसा गणित पढ़ाया जाना चाहिए जो इन दोनों ही उद्देश्यों की पूर्ति करे।

इस के विपरीत यह तर्क दिया जाता है कि अधिकांश बच्चे गणित नहीं समझ पाते हैं, खास कर इस के जो एब्स्ट्रैक्ट (अमूर्त) हिस्से हैं उन्हें वे नहीं समझ पाते हैं। उन का स्कूल से और शिक्षा से दूर होने का एक प्रमुख कारण यह भी है। तो क्या गणित 8वीं तक ही पढ़ाई जानी चाहिए और उस के बाद बच्चे को यह चुनने की स्वतंत्रता होनी चाहिए कि वह गणित पढ़े या न पढ़े? अनिवार्य गणित के रूप में जो पढ़ाया जाए, क्या वह ऐसा होना चाहिए जिसे हम रोज़मर्रा का गणित कहते हैं, जिस में वाणिज्य गणित शामिल है?

ये कुछ सवाल हैं जिन पर हम आप लोगों के विचार सुनना चाहते हैं। इनके अलावा भी इस विषय से सम्बन्धित या उसके आसपास के यदि आप के कुछ अनुभव और सवाल हैं तो हम उन्हें भी सुनना चाहेंगे।

अक्षय दीक्षित

गणित प्रत्येक देश की शिक्षा व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग है। भारत में पूर्व प्राथमिक स्तर से लेकर 10 वीं तक गणित अनिवार्य है। गणित को इतना महत्त्वपूर्ण क्यों माना जाता है? इस के समर्थन में दिए जाने वाले कुछ तर्क और उनसे जुड़ी वस्तुस्थितियाँ निम्नलिखित हैं–

1. गणित विषय की दैनिक जीवन में बहुत उपयोगिता है, इसलिए उसे औपचारिक रूप से सिखाना आवश्यक है।

वस्तुस्थिति– वास्तविक जीवन में हमने देखा है कि जो व्यक्ति किसी तरह की औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते हैं वे भी ज़रूरत पड़ने पर दैनिक जीवन के गणित में पारंगत हो जाते हैं।

2. गणितीय कौशलों (अन्दाज़ा, अनुमान, समस्या समाधान के विभिन्न मॉडल सोचना, सादृष्यीकरण, गणितीय सम्प्रेषण, निरूपण, सामान्यीकरण, बेहतर विकल्प तलाशना, आदि) को प्राप्त करने के लिए गणित पढ़ाना आवश्यक है।

वस्तुस्थिति– कक्षाओं में जो गणित पढ़ाया जाता है, उसमें इन सब बातों पर ध्यान दिया ही नहीं जाता और ये बिन्दु कहीं न कहीं खो जाते हैं।

3. हम एक लोकतान्त्रिक समाज हैं, हमें ऐसे नागरिकों को तैयार करना है जो दूसरों की बातों को बिना सोचे-समझे स्वीकार न करें, बल्कि उन पर तथ्यों के साथ सोच-विचार कर फैसला लें कि क्या सही और क्या गलत है। वे तर्क करें। गणित हमें यही सिखाता है।

वस्तुस्थिति– गणित सिखाने की वर्तमान व्यवस्था इसका ठीक विपरीत सिखाती है। हम गणित में यह सीखने की बात करते हैं कि आँख बन्द कर के निर्णय मत लो, पर कक्षा में होता यही है कि यह थ्यौरी है, यह प्रमेय है, यह ऐसा ही होता है और आप को ऐसा ही करना है। रटने पर अधिक बल होता है, समझने पर कम।

4. गणित दैनिक जीवन के लिए बहुत उपयोगी है इसलिए कक्षाओं में गणित की अवधारणाओं को दैनिक जीवन से जोड़ा जाता है ताकि बच्चा दैनिक जीवन में गणित का प्रयोग कर सके। शिक्षाविद कहते हैं– "ऐसा नहीं होना चाहिए कि कक्षा-कक्ष में किया गया गणित कुछ और हो, और दैनिक जीवन में किया

जाने वाला गणित कुछ और। इन दोनों के बीच अन्तर नहीं होना चाहिए।"

वस्तुस्थिति– दैनिक जीवन से जोड़ने के नाम पर कक्षाओं में जो सवाल करवाए जाते हैं, वे बहुत ही अजीब से होते हैं। आमतौर पर उनका दैनिक जीवन से कोई लेना-देना नहीं होता है, इसीलिए गणित का दैनिक जीवन से कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाता। कक्षाओं में काल्पनिक दुनिया की समस्याएँ हल करवाई जाती हैं। सच्चाई यह है कि गणित का पाठ्यक्रम जीवन से सबसे कम सम्बन्धित है, जिससे कि बच्चों के पास रटने के सिवाय कोई रास्ता नहीं होता।

5. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 (NCF) में कहा गया है–

"गणित की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बच्चे की गणितीकरण की क्षमताओं का विकास करना है।"

स्कूली गणित का उच्च लक्ष्य है बच्चे के साधनों को विकसित करना ताकि वह गणितीय ढंग से सोच सके व तर्क कर सके, मान्यताओं के तार्किक परिणाम निकाल सके और अमूर्त को समझ सके।

यह शिक्षा सुखकर व सहज होनी चाहिए। शिक्षा के भूमण्डलीकरण के सन्दर्भ में, सबसे पहला प्रश्न उठता है, आठ सालों की स्कूली शिक्षा के दौरान बच्चे को कैसा गणित पढ़ाना चाहिए जो उसे केवल उच्च माध्यमिक शिक्षा के लिए ही तैयार न करे बल्कि जीवन भर उसके काम आए। साथ ही गणित की पाठ्यचर्या के लम्बे-चौड़े आकार पर दिए जाने वाले ज़ोर को कम करना चाहिए।

- बच्चे गणित से भयभीत होने की बजाए उसका आनन्द उठाएँ।
- बच्चे सार्थक समस्याएँ उठाएँ और उन्हें हल करें।
- बच्चे अमूर्त का प्रयोग सम्बन्धों को समझने, संरचनाओं को देख पाने और चीज़ों का विवेचन करने, कथनों की सत्यता या असत्यता को लेकर तर्क करने में कर पाएँ।
- गणित व अन्य विषयों के अध्ययन के बीच सम्बन्ध बनाने की भी आवश्यकता है।
- ऐसे कई कौशलों और प्रक्रियाओं की चर्चा करते हुए हमने अधिगम और क्रियाविधियों की बहुलता की बात की है। ये सभी स्कूली गणित को सिर्फ 'पढ़ाए' गए विषय व 'कलन विधि' के इस्तेमाल की तानाशाही से मुक्त करने के लिए ज़रूरी है।

एनसीएफ के अनुसार स्कूली गणित शिक्षा की कुछ समस्याएँ निम्नलिखित हैं–

1. बहुत से बच्चे गणित से डरते हैं और इस विषय में असफलता से भयभीत रहते हैं। वे जल्दी ही गणित की गम्भीर पढ़ाई से विमुख हो जाते हैं (या छोड़ देते हैं)।
2. यह पाठ्यचर्या केवल इस से विमुख होने वालों के लिए ही निराशाजनक नहीं है बल्कि यह प्रतिभाशाली बच्चों के लिए भी कोई चुनौती नहीं पेश करती है।
3. समस्याएँ, अभ्यास व मूल्यांकन पद्धति यान्त्रिक हैं और दुहरावग्रस्त हैं। इनमें, जहाँ संगणना पर अत्यधिक ज़ोर दिया गया है वहीं स्थानिक चिन्तन जैसे गणितीय क्षेत्रों को पर्याप्त स्थान नहीं दिया गया है।
4. अध्यापकों में आत्मविश्वास व तैयारी की कमी है और उन्हें आवश्यक मदद भी नहीं मिल पाती है।

वस्तुस्थिति– एनसीएफ़ में गणित के बारे में जो करने को कहा गया है और जो दस साल बाद आज भी वास्तविकता है, दोनों में ज़मीन-आसमान का अन्तर है। ये बातें बार-बार दोहराई तो जाती हैं, लेकिन कक्षा में नहीं आ पाती हैं। उदाहरण के लिए, एनसीएफ कहता है कि गणित शिक्षा ऐसी हो जो जीवन भर विद्यार्थी के काम आए। यह भी

लिखा गया है कि गणित शिक्षा के लम्बे-चौड़े आकार और इस पर दिए जाने वाले ज़ोर को कम करना चाहिए, मतलब गणित को सरल करने या इसके बोझ को कम करने की ज़रूरत है। वास्तविकता यह है कि एनसीएफ़ गणित के विषय में जो कुछ कहता है, और उसी पर आधारित पुस्तकें जो कुछ परोसती हैं, उसमें भी बहुत अन्तर है।

स्कूली गणित शिक्षा की कुछ अन्य समस्याएँ

एनसीएफ में गणित शिक्षा की जो समस्याएँ दी गई हैं, उनके अतिरिक्त कुछ अन्य समस्याएँ भी मौजूद हैं, जैसे–

1. बच्चों को ज्ञान के निर्माण की प्रक्रिया में भागीदारी का मौका नहीं मिलता।

2. पाठ्यक्रम बहुत अधिक है, अत: अध्यापक को कोर्स पूरा करने की जल्दबाज़ी होती है। इससे वे परीक्षाओं के पाठ्यक्रम के दायरे के बाहर चाह कर भी नहीं जा पाते। शिक्षाशास्त्र कहता है कि पाठ्यपुस्तक केवल एक माध्यम है, लेकिन पूरी व्यवस्था पाठ्यपुस्तक केन्द्रित है। न तो शिक्षक ही उसके आगे जा सकते हैं, न बच्चे ही उसके आगे जा सकते हैं। यह उनकी मज़बूरी है क्योंकि उस पाठ्यपुस्तक पर आधारित पेपर ही आएगा और उस पेपर में मिले अंकों से ही यह निर्णय होगा कि बच्चे को अगली कक्षा में जाना है कि नहीं। इसलिए उस पुस्तक का अक्षरश: पालन करना शिक्षक और बच्चे की मज़बूरी बन जाती है।

3. गणित अत्यधिक अभ्यास की अपेक्षा रखता है, इसलिए बच्चे अपनी पढ़ाई का अधिकतम समय गणित को दे देते हैं।

4. गणित को लड़कियों के लिए विशेष रूप से कठिन माना जाता है। इस धारणा के कई पहलू हैं। जैसे, गणित की पुस्तकों में लड़कियों का उल्लेख तक नाम मात्र के लिए होता है। साथ ही एक प्रश्न यह भी है कि क्या लड़कों के लिए गणित सचमुच आसान है? क्या वे अवसर मिलते ही गणित विषय छोड़ नहीं देते हैं?

5. गणित शिक्षण के तरीकों में दशकों से कोई सुधार नहीं हुआ है, कक्षा में सवालों का स्वागत नहीं किया जाता, सोचने के लिए समय नहीं होता। अर्थात शिक्षाशास्त्र शिक्षक की भूमिका से जो अपेक्षा रखता है वह वास्तविकता में सम्भव नहीं हो पाती है, जैसे कि बाल मनोविज्ञान के अनुरूप पढ़ाना, बच्चों के स्तर के अनुरूप पढ़ाना, जिज्ञासा जगाना, आदि।

6. 'गणित का डर' कई अन्य कारणों से और विकट हो जाता है, जैसे– बच्चों की शिक्षा का आधार कमज़ोर होना, पढ़ाई के प्रति उनकी बढ़ती उदासीनता, कक्षा में अधिक बच्चे, संसाधनों का अभाव (जैसे टूटी-फूटी दीवारें), शिक्षक को हर जगह से मिलने वाली उपेक्षा, आदि।

7. गणित का पाठ्यक्रम ऐसे प्रकरणों से भरा पड़ा है जिन का 99% लोगों द्वारा जीवन में कभी उपयोग नहीं किया जाएगा, जैसे त्रिकोणमिति। इसका कारण ज्ञान का विस्फोट है। हमने बड़े बुजुर्गों को कहते सुना है कि जो कुछ आजकल दसवीं कक्षा में पढ़ाया जाता है, उन्होंने स्नातक स्तर पर पढ़ा था। लेकिन जैसे-जैसे सूचनाएँ बढ़ती जा रही हैं, पाठ्यक्रम निर्माता उन्हें निचली कक्षाओं में भेजते जा रहे हैं। इस के लिए वे बिलकुल अ-गणितीय तर्क का सहारा लेते हैं– बच्चों को अमुक कक्षा में इतना तो आना ही चाहिए। क्यों आ जाना चाहिए? इस का कोई कारण या जवाब नहीं मिलता। उदाहरण के लिए, प्राथमिक स्तर पर रेलवे समय-सारणी जैसे विषय मैंने स्वयं हटवाए थे।

8. शब्द-समस्याओं के साथ होने वाली परेशानियाँ– विद्यार्थियों को शब्द-समस्याओं को समझने में कठिनाई होती है। जो बच्चे गणित में बहुत अच्छे माने जाते हैं, उनके लिए भी शाब्दिक सवाल सबसे ज़्यादा मुसीबत भरा होता है क्योंकि उन्हें पता ही नहीं

चलता कि उस में क्या करना है। अंकगणित के सवालों में यदि जमा का निशान है तो बच्चों को पता चल जाता है कि उन्हें जमा करना है। पर शाब्दिक सवालों में उनको और सोचना पड़ेगा। यह सही है कि गणितीय कौशल के विकास के लिए सोचना बहुत ज़रूरी है, पर सोचने की क्षमता हम बच्चों में उत्पन्न ही नहीं कर सके हैं। इस का पहला कारण है, पढ़कर समझने के कौशल की कमी और दूसरा कारण है, ऐसे प्रश्नों का वास्तविक जीवन और अनुभवों से कटा होना। ये प्रश्न वास्तविक जीवन पर आधारित होने का दावा तो करते हैं लेकिन होते बिलकुल अवास्तविक हैं- जैसे, एक नल किसी बर्तन को इतने घण्टों में भरता है या किसी सेब को बराबर भागों में बाँटना आदि।

9. गणित की कठिन शब्दावली : आमतौर पर गणित की शब्दावली सीखने को भी गणित शिक्षा का एक अंग माना जाता है, लेकिन पुस्तकों में सामान्यत: सरल शब्दों की बजाए कठिन शब्द प्रयोग में लाए जाते हैं; जैसे- तीसरी कक्षा की गणित की पुस्तक में घटाव (-) के पाठ में घटा की जगह व्यवकलन लिखा गया है। अब ऐसे शब्द अगर किताब में होंगे तो ये भी अपने आप में गणित को मुश्किल बनाते हैं।

10. गणित को रोचक बनाने के सुझाव हवा-हवाई हैं क्योंकि वे कड़वी दवाई पर चीनी की परत चढ़ाने के उद्देश्य से सोचे गए हैं, मूल समस्या को हल नहीं करते; जैसे— प्रयोग, मैथ्स लैब, स्मार्ट-बोर्ड, कम्प्यूटर कार्यक्रम, मैथ्स दीवार, मैथ्स क्लब, मैथ्स पत्रिका आदि।

मेरे दिमाग में कुछ बातें तब से हैं, जब से मैंने पढ़ना शुरू किया था। समस्याएँ यदि इतनी सारी हैं तो समाधान क्या होना चाहिए? मैं केवल गणित की बात नहीं कर रहा हूँ। मैं सोचता हूँ कि हम किसी भी विषय को कक्षा आठ या दस तक क्यों पढ़ाएँ?

गणित को 10वीं तक अनिवार्य करना एक तरह से विभिन्नता के सिद्धान्त को नज़रअन्दाज़ करना है। यदि हम कहते हैं कि इस क्लास तक गणित को पढ़ाना चाहिए, तो एक तरफ तो बाल मनोविज्ञान है, विकासात्मक सिद्धान्त हैं, शिक्षण पद्धतियाँ हैं, और इन सबका सबसे महत्त्वपूर्ण स्तम्भ यह सिद्धान्त है कि हर बच्चा दूसरे से अलग होता है।

गणित शिक्षा को अनिवार्य बनाने की वकालत कर के हम इस तथ्य को नकार रहे हैं कि हर बच्चे की रुचियाँ भिन्न होती हैं। मान लीजिए कि बच्चे का मन नहीं है गणित पढ़ने का, न ही उस की क्षमता है; उस का मन चित्रकला सीखने का है, साहित्य पढ़ने का है। फिर तो यह प्रश्न भी उठता है कि वह बच्चा गणित ही नहीं बल्कि किसी भी और विषय को क्यों पढ़े? इसका तर्क यह है कि जीवन के लिए आपको कुछ न कुछ बेसिक आना ही चाहिए। इसलिए एक खास स्तर तक तो मूलभूत कौशलों की शिक्षा को अनिवार्य किया जा सकता है। अतः, जो विकल्प उसे 10वीं के बाद मिलने प्रारम्भ होते हैं वे 5वीं के बाद से ही दिए जाने चाहिए।

गणित ही नहीं, बल्कि हर विषय पर यह बात लागू होती है। बच्चे केवल छह विषय ही क्यों पढ़ें? उनकी रुचि के विषयों की विस्तृत श्रेणी विद्यालय में उपलब्ध होनी चाहिए- संगीत, औजार निर्माण और उपयोग, कम्प्यूटर, नृत्य, अभिनय, पाक-कला, वस्त्र-कला आदि। हर बच्चे के पास में विविधिता के चयन की स्वतन्त्रता होनी चाहिए— आप इन विषयों में से कोई भी विषय चुन कर किसी भी कक्षा में पढ़ सकते हैं। परन्तु व्यवस्था यह नहीं करती क्योंकि इन सपनों को सच करने के लिए विशेष प्रयास और धन चाहिए। जो व्यवस्था अभी छह विषयों के अध्यापक उपलब्ध नहीं करवा पा रही है, वह इतने अध्यापक और संसाधन, जैसे मशीनें, विशेषज्ञ आदि, कैसे उपलब्ध करवाएगी— वह भी प्रत्येक स्कूल में?

प्रत्येक विषय (खासतौर पर गणित) के दो स्तर होने चाहिए—

पहला स्तर– सामान्य गणित का एक आधारभूत पाठ्यक्रम जिसे हर बच्चा पढ़े, जो पूरी तरह जीवन से जुड़ा हो, बेहतर जीवन यापन के लिए आवश्यक सभी कौशल इसके द्वारा सिखाए जाएँ।

दूसरा स्तर– उन बच्चों के लिए जो गणित में ही आगे कैरियर बनाना चाहते हैं, जो गणित में विशेष रुचि रखते हैं या अगली कक्षाओं में गणित की पढ़ाई जारी रखना चाहते हैं।

अवन्तिका

मैंने गणित को बचपन से बहुत चाहा है। अभी जो बातचीत हो रही थी उसे मैंने बहुत ध्यान से सुना और मुझे लगा कि यह डर गणित का दोष नहीं है। दोष गणित पढ़ने-पढ़ाने की प्रक्रिया का है। तो हम गणित को दोषी मानते हुए उसे क्यों सजा दें? बहुत से मुद्दे भी उभर कर आए कि गणित क्यों पढ़ाना चाहिए, किस तरह से पढ़ाना चाहिए– इस बात पर भी थोड़ी बहुत चर्चा हुई।

मैं आप के सामने बच्चों के विचार रखना चाहूँगी। मैंने अपनी छठवीं कक्षा के बच्चों से पूछा कि वे इस बात पर सोचें कि यदि उन के जीवन में गणित न हो तो कितना अच्छा होगा? पहले बच्चे सोचते रहे; फिर बच्चों ने बड़े ही मज़ेदार ज़वाब दिए, जैसे– एक ने कहा कि अगर गणित नहीं होता तो, हमारी क्लास की पट्टियाँ और कक्षाओं के स्तर ही नहीं होते; दूसरे बच्चे ने कहा कि हम क-ख-ग लिख लेते; बसों के नम्बर ही नहीं होते। बात आगे बढ़ी– फिर बच्चों ने कहा कि बसें भी नहीं होतीं; यहाँ उन्होंने गणित को मापने से जोड़ा। यदि हम माप नहीं पाते तो हम बस भी नहीं बना पाते। बच्चों ने कहा, "मैडम, आपका चश्मा भी नहीं होता क्योंकि नम्बर ही नहीं होते!" कुछ बच्चों ने इसे आकार के साथ भी जोड़ा; चर्चा बहुत लम्बी रही। कहने का मतलब यह है कि जिन बच्चों की गणित में रुचि नहीं थी, वे भी यह सोच रहे थे कि गणित उनके जीवन में कितना ज़रूरी है।

अभी-अभी दीक्षित जी ने कहा कि हम भाषा क्यों पढ़ाते हैं। जैसे भाषा हमारे जीवन से जुड़ी हुई है वैसे ही गणित भी हमारे जीवन से जुड़ा हुआ है। हम दोनों को अलग नहीं कर सकते हैं। बच्चे वयस्कों को गणित से खेलते हुए देखते हैं। पिछली चर्चा में बच्चों ने यह भी कहा कि हमारे पास नोट नहीं होते, हम खरीद-बेच नहीं पाते।

बच्चों ने जो विचार बताए उस से यह साफ है कि बच्चे समझते हैं कि गणित उनकी ज़िन्दगी से जुड़ा हुआ है। बच्चे इस बात को महसूस कर पा रहे थे। कुछ बच्चों ने कहा कि उन्हें गणित पढ़ने में बड़ा मज़ा आता है। जब उन से पूछा गया कि क्या मज़ा आता है तो वे खुल कर नहीं बोल पाए क्योंकि उनके पास ऐसे शब्द नहीं हैं जैसे शब्द हमारे पास हैं। जो उन्होंने बताया उसमें कुछ ऐसे पहलू थे, जैसे कि उन्हें पैटर्न्स ढूँढ़ने में मज़ा आता है, पैटर्न्स में छुपे हुए नियम ढूँढ़ना और उसके जैसा कोई नया पैटर्न बनाना, पहेलियाँ हल करना, आकारों के साथ खेलना आदि सब में मज़ा आता है। बाकी बच्चे उन से सहमति में अपनी गर्दन हिला रहे थे। वे बताने की कोशिश कर रहे थे कि गणित हमें यह-यह चीज़ें देता है।

बच्चों को जब हम कविताएँ सिखाते हैं तो उन्हें मिलते-जुलते शब्द वाली कविताएँ ज़्यादा याद रहती हैं, जैसे आना-जाना, खाना-पीना, हाथ-साथ आदि। उसी तरह से गणित में बच्चे पैटर्न्स ढूँढ़ते हैं। जब हम बच्चों को पहाड़े भी नहीं बता रहे होते हैं, जोड़ना भी नहीं बता रहे होते हैं, तब भी पहली और दूसरी कक्षा के बच्चे दस के गुणांक बोल रहे होते हैं। दस, बीस, तीस, सौ, दो सौ, तीन सौ– बच्चे इस तरह से पैटर्न खोज रहे होते हैं। इसमें उन्हें आनन्द आ रहा होता है। जैसे कविताएँ बोलने का आनन्द आता है, वैसे ही वे गणित पढ़ने का आनन्द ले रहे हैं। क्या गणित को उनकी ज़िन्दगी से हटा कर हम उस आनन्द को छीन लेना चाहते हैं?

छोटे बच्चों को हम पैटर्न्स के अलावा आकृतियाँ देते हैं तो वे आकृतियों से खेलते हैं, पट्टियों से खेलते हैं। एक बहुत अच्छा उदाहरण बच्चों ने पैटर्न में दिया, जिसे आप बायोलॉजी

कहेंगे। बच्चों ने कुछ-कुछ पेड़ों के नाम ले कर बताया कि कुछ पत्तों के क्रम आपस में जुड़े हुए हैं, कुछ पेड़ों में पत्ते एक निश्चित दूरी पर लगे हैं और एक पत्ते से दूसरे पत्ते का अन्तर समान है। यह जानना और समझना क्या केवल बायोलॉजी ही है?

गणित न केवल ज़िन्दगी से जुड़ा हुआ है बल्कि सारे विषयों से भी जुड़ा हुआ है। बच्चों ने मुझे यह भी बताया कि जब वे नक्शा बनाते हैं तो ग्राफ के बिना नहीं बना पाएँगे। उन्होंने कहाँ ले जा कर इसे जोड़ा! उन्होंने कहीं पढ़ा होगा कि भारत तो बहुत बड़ा है, जिसे वे नक्शे के एक छोटे से रूप में ले आए हैं, यह छोटा सा रूप अनुपात में लाया गया है।

यह सब कक्षा छह के बच्चों के उदाहरण हैं; उन्होंने कहाँ-कहाँ गणित को जोड़ा, जिसे हम सोच भी नहीं पाते हैं। उन से बात करने के बाद मुझे यह लगा कि एक तो जीवन का आनन्द गणित से जुड़ा हुआ है, ठीक वैसे ही जैसे हम समाज में भाषा द्वारा अपनी बात को कहना, लिखना, बोलना महत्त्वपूर्ण समझते हैं, गणित भी इसमें मदद करता है।

बच्चों ने एक और बात कही कि वे जब अलग-अलग चिह्नों का प्रयोग करते हैं, तो इस का अलग मज़ा है। इसे बच्चों ने सड़क पर बने चिह्नों के साथ जोड़ा। ये चिह्न बिना बोले बता देते हैं कि हमें क्या करना है। कई बार ऐसे पोस्टर भी होते हैं जहाँ शाब्दिक रूप में कुछ भी नहीं लिखा होता है, लेकिन वे हमें बहुत सारी सूचनाएँ दे देते हैं क्योंकि उन पोस्टरों में कोई चित्र इस्तेमाल हो रहा होता है, कोई सिम्बल इस्तेमाल हो रहा होता है। वह किस की देन है– वह पोस्टर जब हम बच्चों के सामने रखते हैं तो बच्चे बहुत सारी चीज़ें बताते हैं। मुझे ऐसा लगता है कि जो चिह्न वे अपनी आम ज़िन्दगी में इस्तेमाल कर रहे हैं, उन में अंक भी चिन्ह ही हैं उनका उपयोग करके वे अलग-अलग संख्याएँ बनाते हैं।

मैं यहाँ पर बात को रोकूँगी। मैंने अभी-अभी दीक्षित जी से बीजगणित की बात सुनी। मैं एक बच्चे का उदाहरण दूँगी– अभी कुछ दिनों पहले मैं एक डिमॉन्सट्रेशन क्लास ले रही थी और वह बीजगणितीय व्यंजक (एल्जेब्रिक एक्स्प्रेशन) की ही क्लास थी। मैंने चर्चा शुरू करते हुए कहा कि जिस में अल्फाबेट होते हैं, वह बीजगणित होता है। मैंने पूछा कि उन्होंने अल्फाबेट कहाँ पढ़े हैं, तो बच्चों ने बताया कि आयत का क्षेत्रफल होता है LXB और यह बताने वाला सातवीं-आठवीं का बच्चा था। उसके हिसाब से LXB बीजगणित नहीं है, यह तो आयत का क्षेत्रफल है। मैं इसे इसलिए ला रही हूँ क्योंकि उस के शिक्षक ने उसे नहीं बताया होगा कि LXB बीजगणित भी है, बच्चे के लिए वह एकदम अलग हिस्सा है।

जैसे कि बात हो रही है गणित शिक्षण, बच्चों को गणित में जोड़ने की जगह गणित से दूर कर रहा है। यह समस्या गणित की नहीं है, यह समस्या गणित शिक्षण की है। यदि हम गणित शिक्षण को मज़बूत करें तो यह सवाल कभी नहीं आएगा कि हमें गणित कब और कितना पढ़ाना चाहिए। गणित कैसे पढ़ाना चाहिए– इसे जोड़ लें तो यह मुद्दा कभी भी नहीं उठेगा कि गणित से हमें डर लगता है या फिर गणित हमें कहाँ तक पढ़ाना चाहिए।

आलोक तिवारी

लगभग ऐसी ही कुछ बातों को लेकर मैं भी यहाँ हूँ। साँस्कृतिक पहलुओं पर विचार करना, उनके बारे में पढ़ना, आदि मेरे शौक हैं। मैं गणित में कभी बहुत अच्छा नहीं रहा। मैं उस गणित को बहुत अच्छी तरह समझ पाता हूँ जो गणित शिक्षा के नाम पर, समाज के नाम पर, अर्थ के नाम पर, संस्कृति के नाम पर की जा रही है। गणित को इस तरह से समझते हुए मैं यह भी समझ पाया कि दरअसल गणित में न तो डरने वाली और न ही डराने वाली कोई बात है।

जब हम यह चर्चा कर रहे हैं कि माध्यमिक स्तर पर गणित की बात होनी चाहिए या नहीं, और इसे आगे कैसे लेकर चलना चाहिए, तब हमें इस बात पर भी गौर करना चाहिए कि

वास्तव में गणित क्या है? अवधारणा के रूप में गणित क्या है? क्या गणित केवल गिनना है या गणित अनुमान लगाना है, तर्क से किसी बात को सिद्ध करना है या किसी बात को समझने के लिए मूर्त से अमूर्त की तरफ बढ़ने की कोई पद्धति है। अगर हम इसे समझ रहे हैं, तो जिसे हम समझा रहे हैं क्या वह उसे नहीं समझता? यानी शिक्षा के क्षेत्र में जो मूलभूत है– एक विद्यार्थी हमारे सामने है, जिसको हमें पढ़ाना है– क्या वह विद्यार्थी जिन चीज़ों को पढ़ने आया है, चाहे वह कोई भी विषय हो, उनको पढ़ने की क्षमता रखता है? जैसे ही हम कहते हैं कि उसे पढ़ाना चाहिए या नहीं पढ़ाना चाहिए, हम उसी को प्रश्न कर रहे हैं कि वह पढ़ने लायक है कि नहीं। मुझे लगता है कि कोई भी औसत विद्यार्थी सीखने की किसी भी क्षमता से वंचित नहीं है। सीखने के तरीके में फर्क ज़रूर हो सकता है। शिक्षक का ज़्यादा बड़ा दायित्व यही है कि वह सिखाने के तरीकों पर विचार करे, न कि यह सोचे कि बच्चे में सीखने की क्षमता है या नहीं?

इस मामले को हम तब गड़बड़ कर देते हैं जब हम यह सोचना शुरू करते हैं कि बच्चा गणित से डरता है। दरअसल बच्चा गणित से नहीं डरता, गणित के साथ जो तमाम तरह की भ्रांतियाँ हैं– और जो केवल गणित के साथ नहीं हैं, वे विज्ञान के साथ भी हैं, अन्य विषयों के साथ भी हैं, भाषा में व्याकरण के साथ भी हैं– वे उसे डराती हैं। यह अवधारणात्मक समस्या है।

चूँकि मैं भाषा का शिक्षक हूँ, तो मैं भाषा की बात करूँगा– व्याकरण पहले है कि भाषा पहले है? अगर भाषा पहले है, मतलब 'कबूतर' पहले है कि 'क' पहले है? यदि कबूतर पहले है तो बच्चे को कबूतर से शुरू करवाना चाहिए, 'क' से क्यों शुरू करवा रहे हैं? तो गणित यदि अनुमान लगाना है, यदि तर्क है, तो फिर गणित को अंकों से ही शुरू करने की ज़िद क्यों? कहने का आशय यह है कि हमारी शुरुआत ही अमूर्त से हो जाती है।

कक्षा शिक्षण के सिद्धान्त में हम कहते कुछ हैं पर व्यवहार में शुरुआत में ही गड़बड़ कर जाते हैं। इस गड़बड़ी का परिणाम यही निकलता है कि कुछ लोग सीख रहे हैं, कुछ लोग नहीं सीख रहे हैं; तो जो नहीं सीख रहे हैं उन के लिए हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि ये बच्चे सीखने की क्षमता ही नहीं रखते हैं। इस स्तर पर इन्हें नहीं सिखाया जा सकता है और गणित इन के लिए कठिन है। यदि गणित कठिन होती तो आम आदमी ज़िन्दगी में इस का प्रयोग क्यों करता? इन्सान की ज़िन्दगी तो बहुआयामी है, उसमें वह भाषा का प्रयोग करता है, विज्ञान का प्रयोग करता है, गणित का प्रयोग करता है और माध्यमिक स्तर तक तो कुशल प्रयोग करने लगता है। यदि उसमें गणित की क्षमताएँ नहीं होतीं तो वह कुशल प्रयोगकर्ता कैसे हो सकता था?

शिक्षा के सन्दर्भ में सोचने समझने वालों के दिमाग में इस तरह का भ्रम बिलकुल नहीं होना चाहिए कि किसी स्तर पर कोई चीज़ सीखी या सिखाई जानी चाहिए कि नहीं। हमें उन विधियों पर चर्चा करनी चाहिए, सीखने की उन पद्धतियों के बारे में बातचीत होनी चाहिए, जो सम्भव हैं और जिन के द्वारा सीखा या सिखाया जाना चाहिए। माध्यमिक स्तर पर गणित के सन्दर्भ में यदि मैं सोचूँ तो गणित सीखने के दौरान मैं सभी तरह की गणनाएँ आसानी से कर लिया करता था। पर जब वही सवाल के रूप में सामने आ जाती थी, तो मैं उसमें असफल हो जाता था।

मेरे पिता गणित के शिक्षक थे, और जब 10वीं बोर्ड की परीक्षा में मेरे 39% नम्बर आए तो घर में वज्रपात सा हुआ। कम अंक आने की वजह यह नहीं थी कि मैं गणित में कमज़ोर था, बड़ी वज़ह यह थी कि मैं अंग्रेजी में कमज़ोर था, और हमारे यहाँ गणित अंग्रेजी में पढ़ाई जाती थी। घर के सभी लोगों ने कहा कि मैं गणित सही से नहीं पढ़ पाता। अब, भाषा शिक्षक होने के बाद मुझे समझ में आया कि दरअसल मैं अंग्रेजी ठीक से नहीं समझ पाता था, इसलिए मैं गणित नहीं समझ पाता था। तो शिक्षकों का यह बहुत

बड़ा दायित्व है कि इस बिन्दु को वे समझें कि सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में जो दिक्कत है, यह किस वज़ह से उत्पन्न हो रही है। ज़रूरी नहीं है कि जिस विषय को हम समझा रहे हैं उस विषय को न समझ पाने की बाधा ही हो क्योंकि जीवन में सभी पहलू एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, अलग-अलग पहलू नहीं हैं। ऐसा बहुत सम्भव है कि गणित न समझ पाना, भाषा न समझ पाने के कारण हो। या गणित न समझ पाना उसकी उपयोगिता न समझ पाने के कारण हो।

अन्त में, मेरा यही कहना है कि विषयों को ऐसे खाँचों में बाँटने की बज़ाए यह समझना ज़रूरी है कि बच्चा विषयों को कैसे समझता है और अलग-अलग बच्चे कैसे समझते हैं। इसके अलावा इस विषय पर अधिक शोध करने की आवश्यकता है कि समझना वास्तव में है क्या? एक तो समझने को अवधारणा के रूप में जानने की ज़रूरत है और फिर समझाए जाने के तरीके के बारे में जानने की ज़रूरत है।

शारदा कुमारी

मैं अपनी स्कूली ज़िन्दगी को आधार बनाते हुए बात कर रही हूँ। मैंने भी गणित पढ़ा है और मैं एक शब्द इस्तेमाल करूँगी कि हर बच्चे के लिए यह एक "त्रासदी" है कि उसे गणित पढ़ना ही पड़ता है। मुझे जब गणित पढ़ने के लिए कहा गया था तो सवाल यही था कि गणित क्यों पढ़ा जाए? तब मुझे बताया गया था कि यह दैनिक जीवन में बहुत काम आएगा, आगे चलकर तुम्हें बहुत पैसे मिला करेंगे तो उन की गिनती रखना, हिसाब-किताब रखना होगा और इसमें कहीं मात न खा जाओ इसलिए गणित पढ़ना ज़रूरी होगा। इस तर्क से आकर्षण तो बढ़ा कि नौकरी करूँगी तो बहुत सारे पैसे आएँगे, हिसाब-किताब रखने के लिए मुझे किसी का सहयोग न लेना पड़े, सब खुद कर सकूँगी तो इसके लिए गणित पढ़ूँगी।

मैं गणित में बहुत अच्छे अंक लाती थी, पर आज की ज़िन्दगी में गणित मुझे कभी काम नहीं आया। आज भी जब सब्जी खरीदने जाती हूँ तो चाहे आवश्यकता हो या न हो, वह आधा किलो या एक किलो ही ली जाएगी क्योंकि सवा और पौन का हिसाब करना मुझे अभी भी नहीं आता है। इस से इतर मैं बात नहीं करती क्योंकि मुझे गिनती करने और हिसाब लगाने में मुश्किल होती है। सीधी सपाट गिनती करने तक तो ठीक है, लेकिन एक छठा, एक पाव या आधा पाव का हिसाब करने में पसीने छूटने लगते हैं।

स्कूल में मेरे जो अंक आए, उनके लिए शिक्षक के पढ़ाने के तरीके और कुदरत ने जो मुझे स्मरण शक्ति दी है— उन दोनों ने काम किया। मेरी स्मरण शक्ति इतनी तेज थी कि मैं पूरा का पूरा सवाल उत्तर सहित याद कर लेती थी, सवाल मेरे ज़ेहन में छप जाते थे, इसके कारण मैं सदा अव्वल रही। गणित, जिसकी मुझे ज़रा भी समझ नहीं थी उसमें भी मैं अव्वल रही। कद छोटा होने के कारण मैं न केवल प्रार्थना सभा में आगे रहती थी बल्कि कक्षा में भी मुझे पहली लाइन में बैठाया जाता था। यह कह कर भी उत्साहित किया जाता था कि बाकी सभी चीज़ों में तुम तेज हो तो गणित में पीछे कैसे रह सकती हो, तो रट-रट कर मैं गणित में हमेशा अव्वल रही। उस समय अव्वल रहने के बावजूद मेरा गणित कमज़ोर है।

अभी कुछ दिन पहले ही मैं एक बस में चढ़ी। मैंने कण्डक्टर से 15 रुपये का टिकिट माँगा। उसने कहा कि इस बस में मुझे 25 रुपये किराया देना होगा। मेरे पास खुले पैसे नहीं थे तो मैंने उसे 50 रुपये का नोट दिया और मेरे दिमाग में तत्काल यह नहीं आया कि वह मुझे कितने रुपये वापस करने वाला है— 15 रुपये मैं पहले दे चुकी थी, 50 रुपये मैंने बाद में दिए हैं तो वह मुझे कितने रुपये वापस करेगा। इस के लिए मुझे अंगुलियों पर गिनती करके हिसाब करना पड़ा। कण्डक्टर मुझे देख कर हँसा और बोला, "लगती तो टीचर हो?" मुझे इस शर्मिन्दगी से बचने के लिए कहना पड़ा, "मैं गणित की टीचर नहीं हूँ।" तो गणित में अव्वल रहना रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में काम नहीं आया, जबकि कहा यह गया था कि गणित इसलिए

पढ़ो कि पैसे गिनना आसान हो जाएगा, पैसे का हिसाब-किताब रखना आसान हो जाएगा।

उसी स्कूली ज़िन्दगी से जुड़ा एक और वाकया है। कुछ इस तरह के सवाल आते थे कि एक आम है जिसे इतने लोगों में बाँटना है, तो वहाँ दशमलव बिन्दु लगाना पड़ता था। जैसे, मैंने एक सेब का टुकड़ा काटा है और इसे 6 लोगों में बाँटना है। मान लीजिए कि इसका उत्तर 2.3 आता है। मेरे ज़ेहन में एक सवाल उठता था कि मेरे पिता जब हम भाई-बहनों को फल काट कर देते हैं तो किसी का टुकड़ा छोटा भी हो जाता था, किसी का बड़ा भी हो जाता था। मैंने अपने माता-पिता को कभी भी इतने बराबर टुकड़े करते हुए नहीं देखा कि सब को एक दम बराबर-बराबर मात्रा में चीज़ें मिलें। मैं अपनी शिक्षिका से इस बारे में सवाल करती थी कि वे हमें इतने बराबर-बराबर टुकड़े करने के लिए क्यों कहती हैं? ऐसा हमने घरेलू ज़िन्दगी में कहीं भी नहीं देखा था। मुझे इस सवाल का ज़वाब नहीं मिल पाया था।

आज से आठ बरस पहले जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में अंकगणित पर एक कार्यशाला थी जहाँ बताया गया कि दशमलव की ज़रूरत हमें रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में नहीं होती है, पर तब होती है जब हम अन्तरिक्ष या ऐसे किसी विषय पर अनुमान लगाते हैं जहाँ सेकेण्ड से भी कम समय की स्थितियों तक का हिसाब रखना पड़ता है। पूरी स्कूली ज़िन्दगी, कॉलेज़ की पढ़ाई और अध्यापक शिक्षक बनने के बाद उस समय मुझे पता चला कि यह दशमलव वाले सवाल क्यों आते हैं।

मुझे लगता रहा कि गणित शिक्षण में इस तरह की कठिनाइयाँ धीरे-धीरे कम होती जाएँगी क्योंकि हम अन्य चीज़ों की तरह शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रगति कर रहे हैं। अध्यापक शिक्षक होने के नाते जब मैं स्कूलों की मॉनिटरिंग के लिए जाती हूँ तो गणित की कक्षा में ज़रूर जाती हूँ– यह देखने के लिए कि आज कक्षाएँ कैसी चल रही हैं, पर दुखद है कि यहाँ रत्तीभर भी बदलाव नहीं है, बल्कि स्थिति पहले से भी बदतर है। मेरे समय में तो हमारी गणित शिक्षिका को अपने आप में गणित करना आता था, वे बिना किसी कुंजी की मदद लिए गणित किया करती थीं। आज तो हर शिक्षक के हाथ में कुंजी होती है। तो, जिस उद्देश्य से गणित पढ़ने की बात राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा कहती है वे सुनहरी बातें हैं, जिनको बोल कर हम खुश हो सकते हैं। यह दुखद तो है, पर गणित शिक्षण की स्थिति मेरे विद्यालयीय जीवन से लेकर आज तक नहीं बदली है।

रेखागणित के बारे में बात करें और उसमें समावेशी शिक्षा की तरफ जाएँ, तो हमारी कक्षाओं में दृष्टिबाधित छात्र भी है, वह कहता है, "सर, हमें दिखाई नहीं दे रहा है।" यदि शिक्षक कहते हैं कि छू कर देख लो, तो श्याम-पट्ट पर सीधी सपाट रेखा को छू लेने से उसे क्या समझ में आएगा? सौभाग्य से दुर्गाबाई कॉलेज में जाने का मौका मिला और यह सीखने का मौका मिला कि त्रिभुज और ऐसी कई चीज़ें ठोस रूप से बनाई जाती हैं। इस तरह की चीज़ें वास्तविक धरातल पर किए जाने की ज़रूरत है। टेक्टाइल सामग्री उपलब्ध है जो ऐसे छात्रों के काम आ सकती है, पर अभी तक यह शब्दावली भी हमारे शिक्षकों के पास नहीं है।

हमारे यहाँ भी गणित शिक्षण एक अनिवार्य विषय है। हमारे यहाँ जो शिक्षक अध्यापक पढ़ते हैं, उनसे बहुत परेशान होकर हमारे कुछ साथी शिक्षक कहते हैं कि इनका कुछ नहीं हो सकता है। पर, जब भी मैं उन विद्यार्थियों के साथ काम करती हूँ, और उनसे कहती हूँ कि आपको इतने गमलों को गेरू से रंगना है, तो उनके हिसाब में कोई गलती नहीं होती है। मैं यह सोचकर हैरान रह जाती हूँ कि ये वही शिक्षक अध्यापक हैं जो गणित में कमज़ोर कहे जाते हैं और गणितीय शिक्षा में उन्हें एक कमज़ोर छात्र घोषित कर दिया जाता है।

डॉ. संजीव शर्मा

आज का जो हमारा विषय है कि क्या

विद्यालय के स्तर पर गणित पढ़ाएँ या कितना पढ़ाएँ, इस पर मैं थोड़ा अलग सोचता हूँ क्योंकि मैं अपने बाल्यकाल में वह विद्यार्थी रहा हूँ जिस का पहला प्यार ही गणित था। इसके बहुत से कारण रहे– सबसे पहला कारण तो यही था कि मैं पश्चिम बंगाल के हावड़ा जिले के एक म्युनिसिपल स्कूल बेलूर में था और मेरे बड़े भाई डॉन बॉस्को स्कूल में पढ़ते थे, जो ठीक मेरे स्कूल की दूसरी तरफ था। उस दौर में संयुक्त परिवार हुआ करते थे। परिवार का एक बच्चा अंग्रेजी माध्यम के स्कूल में पढ़ सकता था और बाकी बच्चों को किसी भी स्कूल में पढ़ाया जाता था। मेरे भाई मुझसे पाँच साल बड़े थे। परिवार के सिस्टम को देखते हुए बड़े भाई का एडमिशन डॉन बॉस्को में हो चुका था और मुझे म्युनिसिपल्टी स्कूल में भेजा गया। पर, मेरे पिता जी हमेशा यही कहते थे कि मेरा स्कूल भईया के स्कूल से बहुत अच्छा है क्योंकि मेरा गणित अच्छा था और डॉन बॉस्को में पढ़ कर भी भईया का गणित ठीक नहीं था।

पारिवारिक रूप से हमारा ट्रांसपोर्ट का काम था तो बचपन में गणित मेरे लिए खेल था– ट्रकों के पीछे के नम्बरों को देखना, उन नम्बरों को जोड़ कर नए-नए नम्बर बनाना। मेरे पिता की बहुत पढ़ाई-लिखाई नहीं हुई थी, पर उनके लिए भी गणित खेल था क्योंकि उन्हें गणित से बहुत फायदा होता था। वे खेल-खेल में गिनती सिखा दिया करते थे। गणित अच्छा जानने की वज़ह से एक सम्मान मिलता था, जो सरकारी स्कूल में पढ़ने की हीन भावना को कम कर देता था। मेरे जितने भी दोस्त थे, सब अंग्रेजी माध्यम स्कूलों में पढ़ते थे, सरकारी स्कूल में पढ़ने के कारण उनके माता-पिता उन्हें मेरे साथ खेलने नहीं देना चाहते थे।

कक्षा पाँचवी तक मेरा गणित बहुत बढ़िया था, कक्षा छठवीं में रातों-रात मेरा गणित खराब हो गया क्योंकि उस साल से हमें बीजगणित पढ़ाना शुरू किया गया। पाँचवीं में अंग्रेजी पढ़ानी शुरू की गई थी; वह विषय मेरे लिए अटपटा था, और जब बीजगणित आया तो फिर वही ABCD। मैंने कभी बीजगणित को गणित माना ही नहीं! बचपन से मैं यह सोचता था कि जो गणित मुझे पढ़ाया जा रहा है उसका क्या महत्त्व है? तो, पहला तर्क यह था कि आंकड़ों का मामला है– जोड़, घटा, गुणा, भाग– ज़िन्दगी में आमतौर पर इन का प्रयोग होगा। ब्याज के सवाल होते थे तो पता था कि परिवार में इस तरह का व्यापार होता है और इस की ज़रूरत पड़ेगी। जब कक्षा छह में बीजगणित आया तब मैंने अपने एक दोस्त से पूछा, "यह क्या है?" दोस्त ने कहा, "अंग्रेजी है।" मैंने भी सोचा ABCD है, तो अंग्रेजी ही होगा।

पाँचवी में बांग्ला भी तीसरी भाषा के रूप में आई थी। मुझे बांग्ला बहुत अच्छे से बोलनी आती है, पर बांग्ला पढ़ना एक अलग बात है। हमें बताया गया कि आठवीं में बांग्ला चली जाएगी; इस का मतलब बीजगणित भी चला जाएगा; तो यह सोचा कि जब इसे आठवीं के बाद चला ही जाना है तो बेकार में क्यों सिर खपाया जाए।

स्कूल ऐसा था जहाँ तीन-चार अध्यापक थे, जिन का काम हमें घेरना था। कितनी बार तो दरबान ही हमारे अध्यापक बन जाते थे। इसी प्रक्रिया में बीजगणित की बेसिक चीज़ को मैं नहीं समझ पाया।

उस समय बंगाल में नवीं और दसवीं का सिलेबस कम्पाइल हो कर आया करता था। इसमें गणित, भौतिकी, जीवविज्ञान और रसायनशास्त्र को मिला कर विज्ञान का ग्रुप बनता था और उस में पास होने के लिए आप को 34% नम्बर चाहिए होते थे। गणित में पास होने के लिए न्यूनतम 20 नम्बर चाहिए होते थे। जब मैं नवीं में आया तो मेरे लिए बड़ी विकट स्थिति पैदा हो गई। अंकगणित के लिए 35 नम्बर, 35 का बीजगणित और 30 का रेखागणित; नवीं और दसवीं के सिलेबस में इतने नम्बर हमें लाने थे। कुल 50 प्रमेय हमें पढ़ने थे, 10 निरमेय पढ़ने थे; मैंने सोचा कि मेरे कम से कम 20 या 34 नम्बर कैसे आएँगे?

मैं तो वास्तव में इतिहास पढ़ना चाहता था,

पर परिवार का दबाव था कि आगे चल कर वाणिज्य ही पढ़ना है। कोर वाणिज्य पढ़ने के लिए ज़रूरी था कि गणित में आप के न्यूनतम नम्बर 34 तो होने ही चाहिए थे। यह 96 का दौर था। मुझे अभी भी याद है कि मैंने केवल 45 नम्बर का पेपर किया था; बीजगणित को मैंने छुआ तक नहीं था।

मेरे साथ मामला यह हुआ कि अंकगणित के सवाल मेरी ज़िन्दगी से जुड़े हुए होते थे। अपनी अनुभव आधारित अवधारणा पर मैं उस के आंकड़ों को समझ पाता था। बीजगणित में ऐसा कुछ नहीं होता था और मैं उसे अपने जीवन से नहीं जोड़ पाता था। मुझे लगता था कि यह ABCD भौतिकी में भी आ गया, रसायन शास्त्र में भी आ गया, गणित में भी आ गया, अंग्रेजी में भी आ गया? मैं इस ABCD से घबरा गया था, मुझे लगता था कि मैं इस से कब मुक्त हो पाऊँगा? दसवीं की परीक्षा में मेरे ठीक 34 नम्बर आए। उसके बाद मैंने कॉमर्स ले लिया। मेरा अकाउण्ट्स बहुत अच्छा था। बाद में मुझे पता चला कि चार्टेड अकाउण्टेण्ट बनने के लिए फिर वही बीजगणित पढ़ना है! तब फिर मैंने इतिहास लिया और वहाँ से मैं आगे की पढ़ाई के लिए प्रेसीडेंसी कॉलेज, कलकत्ता चला गया।

यह मामला है गणित का; मुझे गणित की आवश्यकता भी थी और मैं गणित पढ़ना भी चाहता था, पर सब कुछ होने के बाद भी मैं बीजगणित नहीं कर पाया। मुझे एक छोटी बच्ची ने इसी तरह की एक बातचीत के दौरान बताया– "सर, एक पेन और एक पेंसिल का योग एक पेन और पेंसिल ही होगा।" मैं तो यह सुनकर सन्न रह गया कि एक इतनी छोटी सी अवधारणा को मेरे अध्यापक मुझे नहीं समझा पाये या मुझे नहीं बताया। यदि इस सरल सी संकल्पना को शिक्षक ने समझा दिया होता तो शायद गणित मुझे कभी नहीं छोड़ना पड़ता। मैं गणित में नम्बर को ढूँढ़ा करता था, उसकी जगह ABCD आ गए। गणित वैसे भी अमूर्त विषय है– उसमें भी आप अंकों से अल्फाबेट की तरफ जा रहे हैं, तो यह तो एकदम पहेली हो गई। पर, उस बच्ची ने कितनी आसानी से मुझे बीजगणित का मूल विचार समझा दिया। यदि इसी बात को मेरे शिक्षक उन कक्षाओं में बता देते तो मैं गणित पढ़ना तो नहीं छोड़ता। मैंने अपने कॉलेज के समय में गणित व सांख्यिकी पढ़ने वाले छात्रों को यह कहते हुए सुना है कि गणित से ज़्यादा मज़ेदार विषय कोई नहीं ?

अब यदि इस सवाल पर आ जाएँ कि क्या सभी बच्चों को गणित सीखना चाहिए तो, इसके साथ ही सवाल यह भी है कि क्या बच्चों को स्कूल भेजना चाहिए? यदि गणित नहीं सीखना चाहिए तो क्या सिखाना चाहिए? गणित उनके जीवन की आधारभूत आवश्यकताओं से जुड़ा है, जहाँ जोड़, घटाव, गुणा, भाग के अलावा अनुपात भी आता है, समानुपात भी आता है; यह कहना कि दशमलव स्पेस थ्योरी में जाएगा सही नहीं है। यह वहीं तक का मामला नहीं होता है। आप घड़ी का समय भी देख रहे हैं– यह सब दशमलव से ही जुड़े हुए हैं। जब मुझे घड़ी के समय को आधा करके लिखने के लिए कहा जाता था तो मैं सोचता था कि .50 लिखूँ या .30 लिखूँ क्योंकि वहाँ पर एक घण्टे का मतलब 100 न हो कर 60 हो जाता है। यदि हम औपचारिक शिक्षण की बात कर रहे हैं तो यह सबसे ज़्यादा आवश्यक है।

सवाल यह है कि हम कौन सा गणित सीखना चाहते हैं और कौन वह गणित सिखाना चाहता है? क्या मैं एक विद्यार्थी के रूप में सीखना चाहता हूँ या सत्ता मुझे सिखाना चाहती है– ये दो अलग बातें हैं। यदि मैं एक विद्यार्थी की तरह गणित सीखना चाहता हूँ तो मैं जिस प्रकार के गणितीय आकलन और विश्लेषण पर जाऊँगा, वह मैं अपने नज़रिए से जाऊँगा। पर यदि सत्ता मुझे गणित सिखाना चाहती है तो सत्ता मुझे वही गणित के सिद्धान्त सिखाएगी, वैदिक गणित टाइप के।

मैं अपने सहपाठियों से पूछा करता था, "वैदिक गणित कोई स्कूल है या रटने की कोई कुंजी है? यदि स्कूल है तो मैं भी उसे सीखना

चाहूँगा और यदि रटने की कोई पद्धति है तो गाँव-देहात के किसी बनिये को पकड़ लीजिए, वह अपने बच्चे को जिस तरह से हिसाब-किताब सिखाता है, वही इसे करना सिखा देगा।" तो, क्या सत्ता मुझे गणित सिखाना चाहती है या मैं सिखाना चाहता हूँ या दोनों से तटस्थ एक विद्वत समाज गणित सिखाना चाहता है?

दूसरा मामला है उच्च गणित और निम्न गणित का– आखिर कौन सी क्लास के पहले हम यह फिल्टर लगाएँगे कि इसके बाद आप उच्च गणित लेंगे या इसके बाद आप निम्न गणित लेंगे? मान लेते हैं कि दसवीं के बाद (जैसे कि आप कहना चाहते हैं कि आठवीं के बाद) हम तय कर लें कि उच्च गणित होगा या निम्न गणित होगा।

पहले तो हम यह कह रहे हैं कि बच्चे गणित के डर के कारण फेल हो जाते हैं और पढ़ना छोड़ देते हैं तो देखिए पढ़ने-पढ़ाने का मकसद किसी को उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण करना नहीं होता। यदि आपको ज़बरदस्ती किसी को स्कूल में रखना है तो फिर आप कुछ दूसरे तरीके तलाशें, उस जगह का नाम कुछ और रख दें, विद्यालय न रखें, वहाँ शिक्षक नाम का शब्द न रखें, वहाँ प्रधानाध्यापक जैसा मामला न रखें।

यह तय कैसे होगा कि कौन-सा बच्चा उच्च गणित ही पढ़ेगा? मतलब आप नवीं या दसवीं में उस बच्चे को आईआईटीअन बनाना चाहते हैं (उच्च गणित का मतलब आईआईटी और इंजीनियरिंग वाले मामले पर चला जाता है)। रेखागणित की भी तो ज़िन्दगी में आवश्यकता है। आप निम्न गणित में क्या पढ़ाएँगे? अंक गणित ही न– जोड़, घटा, गुणा, भाग; आगे मिश्रधन, मूलधन, ब्याज वाला मामला बता देंगे। रेखागणित का क्या करेंगे? वास्तविक जीवन में तो रेखागणित और ज्यामिति सबकी आवश्यकता होती है। एक तरफ मैं कहता हूँ कि मैं महात्मा गाँधी की बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्त पर चलना चाहता हूँ; मैं उस सिद्धान्त पर बढ़ना चाहता हूँ तो वहाँ पर भी आपको गणित की ज़रूरत पड़ने वाली है।

अब इससे फर्क बात पर आ जाएँ कि हम गणित न पढ़ाएँ तो फिर हम क्या करेंगे? चलिए, पूरे स्कूल स्तर पर हमने गणित हटा दिया तो क्या हम यह करना चाहते हैं कि सीधे नवीं से गणित प्रारम्भ करेंगे? कौन सा गणित पढ़ाना शुरू करेंगे? एक बार हमने कहा कि आठवीं तक कोई गणित नहीं होगा। अगर हम नवीं में गणित को ले कर आते हैं, तो किस रूप में गणित को ले कर आएँगे? क्या हम उसी रूप में लाएँगे जैसे कि प्रौढ़ शिक्षा में अक्षर ज्ञान की शुरुआत कर रहे होते हैं? उस के बाद आगे बढ़ने का जो कॉमन पेस होता है, तो हम क्या करेंगे? समस्या गणित में है या गणित में पैदा की गई है? हम ज़रा इस के बारे में सोचें।

इस के साथ-साथ एक और सबसे बड़ा मामला है– सत्ता को कायम रखने का। इस में भी इस गणित की बहुत बड़ी भूमिका रही है– एक तरफ आम जनता के उपयोग का गणित है जो सभी सीख लेते हैं, तो दूसरी ओर अमूर्त गणित है, जो मुश्किल हो जाता है, कुछ ही तरह के लोग इसे सीख पाते हैं और कर पाते हैं।

जैसा कि अभी पाठ्यक्रम में उदाहरण की बात चली थी– आप जब भी किसी पाठ्यक्रम में कोई उदाहरण देंगे जो आम ज़िन्दगी से मिलता-जुलता होगा, तो कोई ऐसा उदाहरण नहीं हो सकता जो सब पर लागू हो। तब फिर कक्षा के लिए समस्या है। आप हर बच्चे के लिए अलग सवाल हरगिज़ नहीं बना सकते हैं, एक मॉडल फ्रेम लेते हैं जो अधिकतम के लिए हो। पर ऐसा फ्रेम कैसा हो जो सबको शामिल करे, यह एक मुश्किल मसला है।

सार संक्षेप

इस संवाद में पाँच शिक्षकों ने भागीदारी की। संवाद का मुख्य विषय था– 'गणित की पढ़ाई किस स्तर तक होनी चाहिए?'– इस प्रश्न के उत्तर को टटोलते हुए शिक्षकों ने अपने स्कूली

दिनों, अपने स्वयं के गणित सीखने के अनुभवों और वर्तमान में वे जिन बच्चों को पढ़ा रहे हैं, उनके साथ हुए अनुभवों को याद किया और उनका विश्लेषण भी किया।

प्रस्तुत संवाद में शिक्षक अपनी कक्षाओं व अपने अनुभवों के आधार पर कहते हैं कि गणित के प्रति छात्रों में भय पहले भी था और आज भी है। इस भय का एक मूल कारण गणित सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं में है, न कि गणित में। उनके अनुसार यह कहना सही नहीं है कि बच्चे गणित से डरते हैं। बच्चे भी यह भली भाँति जानते हैं कि गणित का उपयोग वे कहाँ-कहाँ करते हैं और क्या-क्या ऐसी बातें हैं जो गणित के बगैर हम सोच ही नहीं सकते। लेकिन वे यह भी महसूस करते हैं कि कक्षाओं में जो गणित होता है वह इस गणित से फर्क हो जाता है, और इसीलिए बच्चे धीरे-धीरे गणित से डरने लगते हैं।

कुल मिला कर यह बात उभरी कि बुनियादी गणित की पढ़ाई हर बच्चे के लिए होनी चाहिए, पर इसको करने के रास्ते में कई सवाल हैं। अनिवार्य गणित में वे सभी तत्त्व भी शामिल हों, जो बच्चे की उन क्षमताओं का विकास करें जिनसे उसे न सिर्फ व्यवहार में वरन अमूर्त स्तर पर सोच पाने में मदद मिले। पर इसमें क्या-क्या शामिल हो और क्या नहीं, यह एक मुश्किल सवाल है। उनके अनुसार गणित शिक्षण को बच्चों के अनुभवों और सन्दर्भ से जोड़ने का विचार सटीक है, किन्तु अनुभवों की विविधता के चलते इसे कर पाना जटिल है। इसी तरह, कक्षा में बच्चों के सीखने की अलग-अलग रफ्तारों को कैसे समायोजित करें? जहाँ तक विषय के चुनाव का प्रश्न है तो यह सवाल सिर्फ गणित पर ही नहीं बल्कि हर विषय पर लागू होता है कि किसी विषय को किस स्तर तक अनिवार्य रूप से सभी को पढ़ाया जाए। ▣